धारावाहिक 'क्या क्या कहूं'

आस्था

म.क.रैना

मूल कश्मीरी (पछ़) : हिंदी अनुवाद - लेखक

हेमवती ने दूर से देखा। वह कुली किसी यात्री का सामान बस की छत पर चढ़ा रहा था। दूर से यद्यपि कुछ भी साफ साफ नज़र नहीं आ रहा था पर उस कुली की आकृति जान साहब से बहुत मिलती थी। हेमवती तेज़ी से चलने लगी। सामने से गाड़ियों का आना जाना जारी था। लोग भी कम नहीं थे। एक तरफ गाड़ियों का शोर और दूसरी तरफ कंडक्टरों की आवाज़ें। हर कोई जल्दी में था। लोगों और गाड़ियों के बीच से रास्ता बनाते हुये जब हेमवती उस बस के करीब पहुँची, तो कुली जा चुका था। हेमवती ने इधर उधर नज़र दौड़ाई पर कुली का कहीं नामो-निशान न था। हेमवती ने एक और कुली से उस के बारे में पूछा तो पता चला कि वहाँ जान साहब के नाम का कोई कुली था ही नहीं। थक हार कर हेमवती एक दुकान की देहली पर बैठ गई। आँखों से आँसू निकल पडे। 'मेरी आँखें धोखा नहीं खा सकती। वह जान साहब ही थे।' यह सोचते सोचते हेमवती पुरानी यादों में खो गई।

दस साल पहले की बात थी। जान साहब कोई बीस साल के रहे होंगे। कहने को तो वह किसी दूर के गाँव के रहने वाले थे पर अस्लियत किसी को मालूम नहीं थी। जान साहब हमेशा नीले रंग का फेरन पहनते थे। पाजामा टखनों से ऊपर बांधते थे और उनके पैर हमेशा नंगे रहते थे। बाल कंधों तक लंबे थे। जान साहब इस गाँव में कोई छः महीने से आ रहे थे। ज़्यादातर वह महद साहब के घर पर रहते थे क्योंकि वहां उनकी बडी इज़्जत होती थी और नहाने को गर्म पानी मिलता था।

कहते हैं जान साहब की माँ का बहुत समय तक कोई बच्चा नहीं था। आखिर में वह एक दिन किसी दरगाह पर गई और वहाँ बच्चे के लिये मिन्नत की डोरी बाँध ली। उसके बाद ही जान साहब पैदा हुये। जान साहब को पढ़ने लिखने में कोई रुचि नहीं थी। बचपन से ही उनके हाव भाव पीरी फकीरी के थे। आठ साल की आयु में ही वह गाँव गाँव घूमते लगे। जान साहब कभी अपने बारे में कुछ न बताते पर उनके बारे में यह बातें कैसे और कहाँ से आईं, किसी को मालूम न था। गाँव वाले इस बात से ही ख़ुश थे कि जान साहब उनके गाँव में आते थे और उनके दुःख दर्द का निवारण करते थे। बाकी बातों से उनको कोई मतलब न था। समय गुज़रता गया और जान साहब के मुरीद बढ़ते गये।

जान साहब ज़्यादा बातें करने के आदी नहीं थे। आम तौर पर वह सर हिला कर ही जवाब देते थे। पँडितों के घर पर मछली खाने का बहुत शौक था। इसी बहाने पँडित उन्हें अपने घर बुलाते और अपनी तकलीफें सुनाते।

हेमवती दिमाग़दार औरत थी। पूरे गाँव में वह अपने विवेक की वजह से मशहूर थी। गाँव की औरतें प्राय: उनसे मशवरा लेतीं। गाँव के मर्द भी उसकी बडी इज़्जत करते थे। हेमवती ने जब गाँव की दूसरी औरतों से जान साहब के चमत्कारों के बारे में सुना, तो वह दुखी हो गई। ''आज के ज़माने में ऐसी बातों पर कौन विश्वास करता है? यह तो सरासर अंध-विश्वास है, फरसूदा ख़याली है। मक्कार लोग इसी तरह के घटिया चमत्कार दिखाकर सीधे साधे लोगों को ठग लेते हैं। मान लो कभी किसी आदमी की कोई बात सच भी साबित हुई तो उसे भगवान की मरज़ी समझना चाहिये, न कि किसी मक्कार का चमत्कार।''

गाँव वालों को जान साहब के मामले में हेमवती से मतभेद था। उन के लिये जान साहब एक ऊंचे दरजे के फ़क़ीर थे जो समय समय पर आश्चर्यजनक चमत्कार करके उसका सबूत देते थे। हेमवती ने जान साहब को अपनी आँखों से कभी नहीं देखा था पर उसे देखने की ज़रूरत भी नहीं थी। बहुत पहले उसे इसी प्रकार के एक चमत्कारी ठग ने लूट लिया था। हेमवती को अब भी वह घडी याद थी .....

उस दिन हेमवती ने घर का काम काज सुबह सवेरे ही पूरा कर लिया था। उसके पति अर्जन देव अपने अफ़सर के साथ दौरे पर गये थे और वह बिल्लू जी को भी घुमाने के लिये अपने साथ लेकर गये थे। हेमवती बहुत समय से अपने मायके नहीं गई थी। उसकी माँ कुछ समय से बहुत बीमार थी और उसने हेमवती का मुँह देखने के लिये उसे यह कहकर अपने पास बुलाया था कि ज़िंदगी का क्या भरोसा!

ताज़ा इस्तरी किया हुआ फेरन पहन कर हेमवती ने अपने संदूक में से दस रुपये का वह नोट निकाला जो उस ने पंद्रह दिन पहले अर्जन देव से बहुत आग्रह करके लिया था। नोट को फेरन की जेब में रखकर उसने कमरपेटी बांध ली। ''तांगा व गाडी किराया चार रुपये। भाई के बच्चों के लिये कुछ खाने को भी लेना होगा।'' वह जाने की तैयारी कर ही रही थी कि बाहर से आवाज़ आई ''ओ सेठानी! ध्यान दो।'' हेमवती ने खिडकी के बाहर देखा। एक फ़क़ीर सफेद लम्बा फेरन पहने आँगन में खडा था। सर पर बडी हरी पगडी थी और गले में काला गुलूबंद। हेमवती को देखते ही उसने नाटकीय अंदाज़ में कहना शुरू किया, ''दुश्मन ताक़ में है। तुम्हें किसी का सहारा नहीं है। क्या क्या देखोगी और क्या करोगी? काला साँप कुँडली मार कर तुम्हें ताक रहा है।'' हेमवती को याद आया। उसकी जेठानी मन की बहुत मैली थी। जब से हेमवती के पति की तरक्की हुई थी तब से वह ख़ार खाये हुये थी। एक दो बार मामला मरने मारने तक आ गया था। हेमवती की मानसिक हालत देखकर फ़क़ीर जान गया कि तीर निशाने पर लगा है। उसने ऊंची आवाज़ में फिर बोलना शुरू किया, ''दुश्मन ने जादू की पोटली तैयार रखी है। पर तुम तनिक भी चिन्ता मत कर। तुम्हारा कुछ न बिगाड सकेंगे। मेरा खुदा तुम्हारे साथ है।'' हेमवती ने अपने शक को पुख़्ता करने के लिये पूछा, ''पीर साहब! दुश्मन कौन है? ज़रा नाम बतादो।'' मगर फ़क़ीर ने कुछ भी साफ़ साफ नहीं बताय। उसने कहा, ''तुम उसकी चिन्ता मत कर, मुझे ऊपर से हुक्म मिला है। मैं तुम्हारी रखवाली के लिये ही आया हूँ।'' हेमवती का शक़ पुख़्ता हो गया। उसने सोचा, फ़क़ीर खुदा-दोस्त है। मुझे उससे कुरेद कुरेद कर कुछ नहीं पूछना चाहिये। उसे जो कहना था, कह दिया। इस से ज़्यादा और क्या कहेगा। उसने फ़क़ीर से कहा, ''मेरी रक्षा करना। मेरा आप के सिवा और कोई नहीं।'' फ़क़ीर ने कहा, ''तुम कोई चिन्ता मत कर। तुम्हारा कोई कुछ भी बिगाड न सकेगा। लाओ, नोट लाओ। दस्तगीर साहब के हाँ नियाज़ चढ़ाना है।'' हेमवती धक् से रह गई।

उस के पास एक ही दस रुपये का नोट था जो उसने मायके जाने के लिये कब से सम्भाल कर रखा था। उसने फ़क़ीर से कहा, ''पीर साहब, नोट नहीं है। आठ आने हैं, आप कहें तो ....'' फ़क़ीर ने उसकी बात काट दी। कहा, ''नोट है ना पोटली में? जल्दी लाओ, मैं बाद में नहीं आऊँगा। मुझे दस्तगीर साहब वापस बुला रहे हैं।'' हेमवती को यक़ीन हो गया कि फ़क़ीर कोई ऐसा वैसा आदमी नहीं बल्कि ऊँचे दरजे का साधू है और सब कुछ जानने वाला है। यह सोच कर कि दुश्मन उसकी जेठानी ही है और उसको खत्म करना बहुत ज़रूरी है, हेमवती ने जेब से दस रुपये का नोट निकाल कर फ़क़ीर को दे दिया। फ़क़ीर ऊंची आवाज़ मे 'जा ऐश कर, तुम्हारे सब दुश्मन मैंने उडा दिये, तुम्हारा अब कोई कुछ न बिगाड सकेगा' कहते हुये दूर निकल गया।

फ़क़ीर के चले जाने के बाद हेमवती कुछ उदास हो गई। सोचा, ''आज कितने समय के बाद मुझे मायके जाने का अवसर मिला था। पर शायद भगवान की मर्ज़ी नहीं थी। फिर भी जो हुआ, अच्छा हुआ। अगर आज यह फ़क़ीर मुझे न मिलता तो जाने दुश्मन मेरा क्या हाल कर देते। पर भगवान मेरे साथ है। मेरा क्या बिगाड सकेंगे?'' यह सोचते ही हेमवती का चेहरा खिल उठा।

दूसरे दिन हेमवती आसमान से गिर पडी। वह फ़क़ीर उसकी जेठानी और अमीनाजी के घर भी गया था और उन्हें भी उसने वही कहानी सुनाई थी जो वह हेमवती को सुनाकर गया था। पर इतना ही नहीं हुआ। पता चला कि हेमवती की माँ उस दिन सुबह से ही अपने घर के दरवाज़े पर नज़र रखकर हेमवती के आने की राह देखती रही। देर रात को उसके प्राण निकल गये। यह सुन कर हेमवती पागलों की तरह अपना सीना पीटने लगी। पर अब पछताने से क्या हो सकता था। मक्कार फ़क़ीर तो अपना काम करके गया था।

''पर जान साहब उस तरह के लोगों में से नहीं हैं। वह एक सच्चे मलंग हैं। उन्होंने जिसके सर पर अपना हाथ रखा, उसकी किस्मत बदल गई। सच पूछो तो हम उनके ही सहारे जी रहे हैं। मेरे पति के मन में भी उन के प्रति बहुत श्रद्धा है'', हनीफ़ाजी हेमवती को सुना रही थी। हेमवती ने कहा, ''नहीं नहीं, मुझे अब किसी पर भरोसा नहीं है।'' शीलाजी इन दोनों की बातें ध्यान से सुन रही थी। हेमवती की बात उसके गले नहीं उतरी। उसने कहा, ''लेकिन हर्ज भी क्या है? वह थोडे ही पैसा माँगते हैं। हाँ, एक सेर मछली लानी होगी। तुम खुद सोचो कि भाई साहब को कितनी तक़लीफ़ है।'' एक महीने से अर्जन देव के दफ़्तर में एक नया अफ़्सर आया था। उसी ने अर्जन देव को परेशान करके रखा था। अगले पिछले का हिसाब मांग रहा था और बात बात पर सस्पेंड करने की धमकी देता था। उसके दुरव्यवहार से अर्जन देव के घर की शान्ति पहले ही बिगड चुकी थी। अब उसकी सेहत पर भी असर पड़ने लगा। शीलाजी की बात सुन कर हेमवती नर्म पड़ गई। सोचा, हरज भी क्या है। हुआ तो अच्छा, नहीं हुआ तो ना सही। नुक़सान क्या है। एक सेर मछली का ही तो सवाल है। देख लेंगे।

महद साहब के विनती करने पर जान साहब हेमवती के घर आने को राज़ी हो गये। महद साहब उनके साथ आये और अपने घर से उनके लिये हुक्का भी मंगवा लिया। खाना खाने के बाद जब अर्जन देव हुक्के की चिलम फूँकने लगे तो जान साहब ने कहा, ''रहने दो। हुक्का ठीक चल रहा है। जाकर आराम कर लो। मालिक सब ठीक करने वाला है।'' हेमवती ने कुछ कहना चाहा तो महद साहब ने उनके कान में कहा, ''मलंग को सब मालूम है। उन्हें विस्तार से बताने की ज़रूरत नहीं।'' तम्बाकू पीकर जान साहब और महद साहब वहाँ से निकल पडे। अर्जन देव और हेमवती रात भर परेशान ही रहे कि पता नहीं आगे क्या हो।

चार दिन में अर्जन देव के अफ़सर का तबादला हो गया। ऊपर से आये आदेश में उन्हें दो दिन के अंदर पुरानी जगह वापस जाने को कहा गया था। ज्योंही गाँव वालों को पता चला, वह हेमवती को मुबारकबाद देने के लिये उसके घर पर आ गये। पर हेमवती घर पर न थी। वह महद साहब के घर जाकर उनसे माफी माँग रही थी कि अनजाने में उसने जान साहब के बारे में ग़लत सोचा था। वह जान साहब के पैर चूमना चाहती थी पर जान साहब रात को ही वहाँ से निकल गये थे।

इस के बाद एक और घटना घटी। एक दिन हेमवती घर में बैठी चावल चुन रही थी। अचानक जान साहब आ गये और चाय की फरमाईश की। हेमवती बहुत खुश हुई। अभी तक वह हर बार उनसे मिलने और सलाम करने महद साहब के घर जाती थी। आज वह खुद ही उसके घर पर आये थे। जान साहब के पीछे तकिया लगाकर और टांगों पर चादर डालकर हेमवती चाय बनाने गई। चाय लेकर जब वापस आई तो देखा जान साहब खडे हैं और जाने की तैयारी में हैं। उन्होंने चाय पीने से इनकार किया। हेमवती ने देखा, जान साहब के हाथों में वह मोटर खिलौना था जो अर्जन देव ने कुछ दिन पहले ही बिल्लूजी के लिये लाया था। इससे पहले कि हेमवती कुछ कहती, जान साहब ने कहा, ''यह बला यहाँ कौन लेकर आया है। मैं पहले इसे फैंक कर आता हूँ।'' यह कहकर जान साहब तेज़ कदमों के साथ निकल पडे और हेमवती अपने आप को कोसती रही, ''कितना कीमती मोटर था। पता नहीं उन्हें इस में क्या खराबी नज़र आई?''

दूसरे दिन जब हनीफ़ाजी हेमवती से मिलने आई तो हेमवती ने देखा, उसकी आँखें लाल थीं। लगता था, सारी रात सोई नहीं है। हेमवती ने पूछा, ''क्या बात है? कुछ परेशान लग रही हो? घर में सब ठीक हैं ना?'' हनीफाजी ने कहा, ''हम रात को अमीनाजी के घर पर थे। उसका लडका बशीर बहुत बीमार था। अमीनाजी कहती थी कि वह कल रात कहीं से एक खिलौना मोटर लेकर घर आया और उससे खेलने लगा। देखते ही देखते उसे ज़बरदस्त बुखार आ गया और गश खाने लगा। आज सुबह ही उन्होंने वह खिलौना बाहर फैंक दिया। अब उसे कुछ आराम है। हम रातभर कहाँ सोये?'' हनीफाजी की बात सुन कर हेमवती सोच में पड गई। उसे पूरा यक़ीन था कि वह उनका ही खिलोना था जो जान साहब ने फैंक दिया था। यह जानने के लिये कि कहीं अमीनाजी को यह तो पता नहीं चला कि वह खिलोना उनके घर से फैंका गया था, उसने पूछा, ''बशीर ने खिलोना कहाँ से लाया था?'' हनीफाजी बोली, ''कहीं कूडे के ढ़ेर से उठाया था।'' हेमवती की जान में जान आ गई। वह जान साहब को दुआयें देने लगी जिन्होंने उसके घर से वह बला टाल दी थी। ''जान साहब न आते तो पता नहीं हमारा क्या हश्र होता?'' इस घटना के बाद वह कुछ ज़्यादा ही जान साहब की मुरीद हो गई। जान साहब जब भी गाँव में आते, वह सब से पहले उन के पास पहुँच जाती और उनके पैर धो लेती।

एक साल से जान साहब गाँव में नहीं आये। उनका कोई पता भी न चला। गाँव वाले बहुत परेशान थे कि अब उनके दुखों का निपटारा कैसे होगा? एक दिन किसी ने खबर दी कि पंद्रह मील दूर एक दूसरे गाँव में जान साहब को देखा गया है। महद साहब तीन चार आदमी लेकर उस गाँव में गये। वहाँ पता चला कि जान साहब नाम का कोई आदमी उस गाँव में रहता ही नहीं। महद साहब ने जब गाँव वालों को जान साहब का हुलिया बताया तो वह हैरान हो गये। गाँव में उस हुलिये का एक ही आदमी था और उसका नाम था गुलाम नबी, जिसे वह नबा कहकर पुकारते थे। पर वह भी दो साल पहले गाँव छोड कर चला गया था। महद साहब ने जब नबा की कहानी सुनी तो वह भी हैरान हो गये।

नबा का बाप उसके बचपन में ही गुज़र गया था। उसकी माँ ज़्यादातर बीमार रहती थी। नबा के भाई बहन न थे। उसकी पांच छः कनाल ज़मीन थी जिसपर वह गुज़ारा करता था। उसकी ज़मीन यूसुफ साहब के ज़मीन के बीचों बीच थी। यूसुफ साहब नबा का चाचा था और भाई के मरने के बाद वह नबा की ज़मीन हड़पना चाहता था। नबा बहुत समय तक अपने चाचा से लडता रहा लेकिन जब चाचा ने एक दिन उसे अपने नौकरों से पिटवाया, उसकी हिम्मत टूट गई। गाँव वाले केवल तमाशा देखते रहे क्योंकि यूसुफ साहब से वह भी डरते थे। इसके बाद नबा को गाँव वालों से नफ़रत हो गई। इसी बीच उसकी माँ भी गुज़र गई। फिर एक दिन नबा रात के समय गाँव से भाग गया। उसके बाद वह केवल दो बार गाँव आया और गाँव के गिर्द चक्कर लगाकर वापस गया। महद साहब ने जब लोगों को जान साहब की कहानी सुनायी और यह कहा कि जान साहब और नबा एक ही आदमी के दो नाम हो सकते हैं तो वह हँस पडे। उन्होंने कहा, ''नबा मलंग होता तो मार ही क्यों खाता?''

हेमवती रो रही थी। आज वह बडी मुसीबत में थी। अर्जन देव बीमार थे और शहर के सबसे बडे अस्पताल में उनका इलाज चल रहा था। पंद्रह दिन हो गये थे उन का इलाज चलते पर उनकी हालत दिन-ब-दिन खराब ही होती जा रही थी। अस्पताल के डाक्टरों ने हेमवती को मशवरा दिया था कि वह उन्हें लेकर दिल्ली चले जायें पर हेमवती में उतना खर्च उठाने की ताकत न थी। वह अपने रिश्तेदारों से मदद माँगती रही पर कोई खास फायदा न हुआ। उसने बिल्लूजी को गाँव में ही एक हमसाये के घर पर छोडा था और खुद अस्पताल में रहकर अर्जन देव की देखभाल करती थी। हब्बा कदल में उसकी एक ननद रहती थी जो उनके लिये खाना लाती थी। पर हेमवती से खाया कहाँ जाता था। अर्जन देव को तो चार दिन हो गये थे कुछ खाये हुये।

हेमवती को दुकान की देहली पर ही नींद आ गई। आज रात वह बिलकुल ही न सोई थी। उसके पति की हालत ठीक नहीं थी। डाक्टरों का कहना था कि बीमार की हालत बहुत गंभीर है और वह ज़्यादा से ज़्यादा आठ या दस दिन का मेहमान है। हेमवती को उसके नन्दोई ने कहा, ''मेरे खयाल में तुम अभी गाँव चली जाओ। घर की खबर भी लो और बिल्लूजी को यहाँ लेकर भी आओ। क्या खबर, किस्मत में क्या लिखा है। एक बार अपने पिता का मुँह तो देख लेगा।'' रोते रोते मगर हिम्मत करके हेमवती गाँव की बस पकडने बस अड्डे पहुँची पर यहाँ जान साहब से मिलते जुलते किसी कुली को देखकर पुरानी यादों में खो गई।

किसी गाडी का तेज़ हार्न सुनकर हेमवती जाग गई। किसी से समय पूछा। नौ बज चुके थे। बस की टिकट लेने के लिये ज्यूंही उसने पैसे निकाले, उसकी नज़र एक चाय की दुकान पर पडी। दुकान के अंदर एक आदमी ज़मीन पर बैठ कर तम्बाकू पी रहा था। हेमवती ने आँखों को ज़ोर से रगडा। यह वही था। हेमवती ने टिकट काऊंटर पर ही छोड़ दी और पागलों की तरह दुकान की तरफ दौड पडी। जान साहब तम्बाकू पीने में मस्त थे। हेमवती ने उन के पैरों पर अपना सर रखा और रो पडी। जान साहब ने पूछा, ''आप रो क्यों रही है?'' हेमवती ने बिना सर उठाये जवाब दिया, ''बाबा, कितने समय से आप को ढूंढ़ रही हूँ। मुझे बस आप का ही सहारा है। आग में जल रही हूँ। आज मेरे लिये कुछ कीजिये नहीं तो यहाँ ही अपनी जान दूंगी।'' जान साहब कुछ न बोले। लोगों की समझ में भी कुछ न आया। इस औरत को क्या तकलीफ़ है और तीस साल के जवान को वह बाबा कहकर क्यों पुकार रही है? पास खडे एक आदमी ने कहा, ''बहन, यह बाबा नहीं है, इस का नाम गुलाम नबी है। इसकी तो अभी शादी भी नहीं हुई है।'' पर हेमवती किसी की बात नहीं सुन रही थी। वह केवल जान साहब की बात सुनना चाहती थी। जान साहब ने उसके सर पर हाथ रखा। हेमवती ने सर

उठाया। आँखों से आँसुओं की धार निकली। जान साहब ने कहा, ''मैं एक मज़दूर हूँ। मेरे पैरों पर गिर कर मुझे क्यों गुनाहगार बना रही हो। तक़लीफ़ क्या है?'' हेमवती ने कहा, ''मेरे पति बीमार हैं। बचने की कोई उम्मीद नहीं है। आपका ही आसरा है।'' जान साहब ने हेमवती के सर पर हाथ फेरा और कहा, ''चिन्ता मत कर। जाओ कहाँ जाना है। मालिक सब ठीक कर देगा।'' यह कहकर जान साहब दूसरे मज़दूरों के साथ अपने काम पर निकल पडे। हेमवती उन्हें देखती रही। जान साहब का पाजामा आज भी टख़नों से ऊपर बाँधा था और पैर नंगे थे।

हेमवती दूसरे दिन गाँव से वापस आ गई। बिल्लूजी को भी अपने साथ लाई। अस्पताल पहुँची तो देखा अर्जन देव के इर्द गिर्द बहुत लोग जमा थे। हेमवती की टाँगें लरज़ने लगी। ''कहीं कुछ अशुभ न हुआ हो!'' किसी ने कहा, ''लो, आगई।'' लोग इधर उधर हटने लगे। पास आ गई तो अजीब आलम देखा। अर्जन देव तकिये से टेक लगाये डाक्टर साहब से बात कर रहे थे। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि बीमार की हालत कैसे सुधर गई। अर्जन देव के हाथ में दूध का गिलास था और वह एक एक घूंट करके पी रहे थे। हेमवती को देखते ही उसका चेहरा खिल उठा और उसने हेमवती का हाथ अपने हाथों में लिया। हेमवती ने उनके कान में कहा, ''मैंने कल जान साहब को देखा।''

दूसरे दिन हेमवती और उसके नन्दोई जान साहब से मिलने बस अड्डे पहुँचे। चाय वाले के पास जाकर पूछा, ''भैया, जान साहब कहाँ हैं?'' चाय वाला कुछ भी न समझ पाया। उसने पूछा, ''कौन जान साहब?'' हेमवती ने कहा, ''जो मुझे परसों यहाँ मिले थे और जिसे आप गुलाम नबी कहकर पुकारते थे।'' चाय वाले ने कहा, ''वह कल शाम को ही यहाँ से चला गया। कह रहा था, बहुत दूर जाना है।'' हेमवती ने पूछा, ''यहाँ आये कब थे?'' चाय वाले ने कहा, ''परसों ही आया था। कल दूसरा दिन था।''

अर्जन देव को एक सप्ताह बाद अस्पताल से छुट्टी मिल गई। वह अब बिलकुल ठीक थे। बडे डाक्टर ने बताया कि उन का इलाज ग़लत हो गया था। गाँव के तांगों के अड्डे पर अर्जन देव को मिलने सारा गाँव आ गया था। जब अर्जन देव तांगे से उतरे, महद साहब ने उन्हें गले लगाया। सब लोग खुश थे। एक इसलिये कि अर्जन देव अब ठीक हो गये थे। दूसरे इसलिये कि हेमवती को जान साहब खुद मिले थे।

एक दिन महद साहब ने हेमवती से पूछा, ''आपको क्या लगता है? क्या जान साहब फिर यहाँ कभी नहीं आयेंगे?'' हेमवती ने अर्जन देव की तरफ देखा। एक ठंडी साँस ली और महद साहब से कहा, ''आयेंगे क्यों नहीं, ज़रूर आयेंगे। जब सच्चे मन से कोई उन्हें याद करेगा।''